B.A.Part – I, Philosophy (Hons), Paprer - I **Date:02.05.2020**

अनेकान्तवाद

डॉ0 राम नारायण शर्मा
अध्यक्ष, सह-आचार्य, दर्शनशास्त्र विभाग
जे0 एम0 एस0 कॉलेज, मुंगेर
(मुंगेर विश्वविद्यालय, मुंगेर)

अनेकान्तवाद जैनदर्शन की तत्वीमांसा का आधारभूत सिद्धांन्त है। यह चिन्तन की एक ऐसी अवधारणा है जिसमें विभिन्न दृष्टिकोणों के माध्यम से किये गये चिन्तन से निगमित सिद्धान्तों का समन्वयात्मक रूप उपलब्ध होता है। इसके द्वारा हमें वस्तु–सत्ता के यथार्थ एवं वास्तविक स्वरूप को समझने में सहायता मिलती है। अनेकान्त में 'अन्त' पद का अर्थ वस्तु एवं धर्म दोनों है। इसलिए अनेकान्त का अर्थ होता है कि इस जगत में अनेकानेक (अनन्त) वस्तुएं है और प्रत्येक वस्तु का अनेकानेक (अनन्त) धर्म है। इसलिए तत्त्व को जैन दर्शन में अनन्त धर्मात्मक माना गया है।[1] वस्तु में एक साथ सत्–असत्, भाव–अभाव, आदि विरूद्ध धर्म विद्यमान होते है, जिसका ज्ञान हमें एकान्त दृष्टि से नही हो सकता है, उसके लिए अनेकान्त दृष्टि होनी चाहिए। समस्त वस्तुएं किसी दृष्टि अथवा अपेक्षा से ही सत् अथवा असत् प्रतीत होती है। पदार्थ का यह स्वभाव ही है कि वह एक धर्म को छोड़कर दूसरा धर्म ग्रहण करे। प्रत्येक पदार्थ अपने स्वरूप की अपेक्षा सत् है वही पररूप की अपेक्षा असत् भी है। सत्–असत्, भाव–अभाव, शाश्वत–उच्छेद आदि विरोधी मालूम पड़ते है, परन्तु इन विरोधी धर्मो का जैसा समन्वय अनेकान्तवाद में प्राप्त होता है, वैसा अन्यत्र दुलर्भ है। किसी एक वाद या दृष्टि को ग्रहण करना संकीर्णता है, परन्तु अनेकान्तवाद से विरोधी धर्मों का समन्वय करना उसके विशाल दृष्टि एवं विचार का परिचायक है। ''अनेकान्तवाद वस्तुतः दो एकान्तवादी दृष्टियों को मिलाने वाली एक मिश्रित दृष्टि मात्र नही है बल्कि यह एक स्वतंत्र दृष्टि है, जिसके द्वारा वस्तु का पूर्ण स्वरूप प्रतिभाषित होता है।''[2]

जैन धर्म का कथन है कि एक–एक दर्शन (विचार) नानारूपिणी सत्ता के अंश का विवेचन करने में अपना महत्व रखते हैं। फिर भी उसमें आपस में किसी प्रकार के मतभेद के लिए स्थान नही हैं। सभी अंश अपेक्षा से उसमें विद्यमान रहते हैं।[3] अनेकान्त इसी सह–अस्तित्व पर बल देता है। इस उदारवृत्ति तथा विशालता के कारण जैन तत्त्वज्ञान का किसी भी दर्शन से विरोध नहीं है।[4] इस तरह जैन दर्शन में सर्वथा एक ही दृष्टिकोण से पदार्थ का अवलोकन करने की पद्धति को अपूर्ण एवं अप्रमाणिक समझा जाता है और एक ही वस्तु के विभिन्न धर्मों को विभिन्न दृष्टिकोणों से निरीक्षण करने की पद्धति को पूर्ण एवं प्रमाणिक माना जाता है। यह पद्धति ही अनेकान्तवाद है।

भारतीय दर्शन में अनेकान्तवाद का सिद्धान्त समन्वयात्मक पक्ष को बल प्रदान करने वाला एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। यह जीवन के आचार–विचार, व्यवहार और तत्त्वचिन्तन दोनों को प्रभावित करता है। इस सिद्धान्त की उद्भावना में समता और सहिष्णुता की वह भावना निःसंदेह सहायक रही है जो जैन दर्शन की आधारभूमि है। जैन दर्शन ने 'अपनी अनेकान्त दृष्टि' से विचारने की दिशा में उदारता व्यापकता और सहिष्णुता का ऐसा विस्तार किया है, जिससे व्यक्ति दूसरे के दृष्टिकोण को भी वास्तविक और तथ्यपूर्ण मान सकता है। जब तक हम अपने ही विचार और दृष्टिकोण को वास्तविक और सत्य मानते हैं तब तक दूसरे के प्रति आदर और सम्मान का भाव ही नहीं हो पाता। अतः अनेकान्त दृष्टि दूसरे के दृष्टिकोण के प्रति सहिष्णुता वास्तविकता और समादर का भाव उत्पन्न करती है।[5]

जैन दर्शन सिर्फ शारीरिक अहिंसा को ही आवश्यक नहीं मानता, बल्कि बौद्धिक अहिंसा पर भी विशेष रूप से बल देता है। यही बौद्धिक अहिंसा जैन दर्शन का अनेकान्तवाद है जो अपने जीवन तथा विचारों की सत्यता के साथ–साथ दूसरे के विचारों की सत्यता को भी स्वीकार करता है। अर्थात् आंशिक मतों की संकीर्णता को त्यागकर एक समन्वयवादी विचार लाना होगा। यह जैन दर्शन के अनेकान्तवादी दृष्टि से ही संभव है।

अनेकान्तवाद की सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में भी समन्वय स्थापित करने की महत्वपूर्ण भूमिका है। वर्त्तमान समय में व्यक्तिगत जीवन हो या सामाजिक, तनावपूर्ण एवं अशांतिपूर्ण बना हुआ है। एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से, एक समाज दूसरे समाज से तथा एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से विरोध एवं वैमनस्य का भाव बनाये रखे है। इस विरोध एवं वैमनस्य का मुख्य कारण है– एक समन्वयवादी विचार का अभाव। सभी अपने–अपने मतों एवं विचारों के सत्य एवं सर्वमान्य होने का दावा करते हैं, जिसके फलस्वरूप दूसरे के विचारों से विरोध होता है। फलतः सामाजिक एवं राजनैतिक अशांति एवं वैमनस्य का भाव उत्पन्न होता है।

धर्म के क्षेत्र में भी जितने विवाद या मतभेद देखे जाते हैं उन सबके मूल में समन्वयवादी दृष्टिकोण का अभाव ही है। इन्हीं मतभेदों के कारण ही विश्व में कई युद्ध हुए हैं। आज भी इसी धार्मिक मतभेद ने अन्य कई दूसरे मतभेदों को भी उत्पन्न किया है।[6] आज व्यक्ति–व्यक्ति के बीच, धर्म–धर्म के बीच तथा सम्प्रदाय–सम्प्रदाय के बीच गहरी खाई दीख रही है। एक व्यक्ति अपनी ही बात को पूर्ण सत्य मानकर दूसरों के कथन को असत्य बतलाता है। इसी प्रकार एक धर्म के अनुयायी अपने ही धर्म को एकमात्र श्रेष्ठ मानकर दूसरे धर्मो को हेय दृष्टि से देखते हैं। कोई भी व्यक्ति या धर्म अपनी ही डफली बजाने में व्यस्त है। उसे दूसरों की बात सुनने या समझने का समय ही नही है। इसके परिणाम स्वरूप आधुनिक समाज परस्पर वैमनस्य एवं कटुता के भयंकर रोग से जर्जर हो गया है। इस समस्या का सही समाधान भगवान् महावीर के 'अनेकान्तवाद' द्वारा ही हो सकता है।

प्रत्येक पदार्थ को पूर्णरूप से समझने के लिए उसे विभिन्न दृष्टियों से देखना 'अनेकान्तवाद' है। इसके विपरीत, उसे एक ही दृष्टिकोण से ही देखना तथा उस दृष्टि–विशेष से ग्रहण किये हुए उसके अंश को पूर्ण सत्य मान लेना 'एकान्तवाद' है।

जैन–दर्शन प्रत्येक पदार्थ में अनेक धर्मों को स्वीकार करता है। अतः वस्तु में स्थित पूर्ण सत्य को देखने के लिए उस पर सभी पहलुओं से विचार करना होगा। एक दृष्टिकोण से जो सत्य परिलक्षित होता है, दूसरे दृष्टिकोण से वह असत्य भी कहा जा सकता है। इस सिद्धान्त के अनुसार आत्मा एक दृष्टिकोण से नित्य है, तो वह दूसरे दृष्टिकोण से अनित्य भी है। एक व्यक्ति अपने पुत्र की दृष्टि से पिता है, तो वही व्यक्ति अपने पिता की दृष्टि से पुत्र भी है। आधुनिक युग में, महान् वैज्ञानिक आइंसटीन का 'सापेक्षवाद का सिद्धान्त' (Theory of Relativity) जैन–धर्म के अनेकान्तवाद से मिलता–जुलता है। अनेकान्तवाद विश्व में चल रहे विभिन्न पारस्परिक झगड़ों, द्वन्द्वों एवं संधर्षों को शांन्त करने के लिये नितान्त आवश्यक है। इस सिद्धान्त को मानने पर विभिन्न धर्मों एवं सम्प्रदायों के बीच पारस्परिक विरोध ही नहीं, घर–घर में तथा सामाजिक–राजनैतिक क्षेत्र में चल रहे संघर्षों को भी समाप्त किया जा सकता है।

जैन तीर्थकरों ने मानव की अहंकार मूलक प्रवृति और उसके स्वार्थी वासना से वंशीभूत मानस का स्पष्ट दर्शन कर उन तथ्यों की ओर प्रारम्भ से ध्यान आकृष्ट किया है जिससे मानव की दृष्टि का एकांगीपन दूर हो, उसमें अनेकांगिता का समावेश होता है तथा वह अपनी दृष्टि की तरह सामने वाले मनुष्य की दृष्टि का भी सम्मान करना सीखता है, उसके प्रति सहिष्णुता आती है। दृष्टि में इस प्रकार के भावों का समावेश हो जाने से उसकी भाषा परिवर्तित हो जाती है। उसमें स्वमत की हठग्राहिता हटकर समन्वय की प्रवृति आ जाती है।[7] उसकी भाषा में दूसरों के तिरस्कार का भाव भी होकर उनके अभिप्राय विवक्षा और अपेक्षा दृष्टि को समझने की स्वाभाविक और सहजवृति आ जाती है।[8]

वर्त्तमान–युग में हमारा देश जातिवाद एवं वर्ण–व्यवस्था के कोढ़ से पीड़ित है। जाति और वर्ण के आधार पर व्यक्ति को ऊँच–नीच समझने की परम्परा पूर्णतः गलत है। ब्राह्मण गुणहीन होने पर अपने को अन्य वर्ण के लोगों से श्रेष्ठतम मानता है। इसी प्रकार शूद्र आदि तथाकथित निम्न जाति के लोगों को गुणवान रहने पर भी हेय दृष्टि से देखा जाता है। उन्हें समाज में उपयुक्त स्थान नहीं मिल पाता। इस प्रसंग में भगवान् महावीर का उपदेश अत्यधिक महत्वपूर्ण है

महावीर ने स्पष्ट शब्दों में घोषणा की कि ब्राह्मण–जाति में जन्म लेने मात्र से कोई ब्राह्मण नही हो जाता। जिसने राग, द्वेष, भय आदि पर विजय प्राप्त कर ली है, जो मिथ्या–भाषण नहीं करता और सभी प्राणियों के हित में तल्लीन रहता है, वही सच्चा ब्राह्मण है। जन्म से नहीं, कर्म से ही व्यक्ति ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र होता है।[9] इस प्रकार जाति–प्रथा के रोग से आधुनिक समाज को मुक्त करने में भगवान् महावीर का उपदेश अमूल्य है।

अनेकान्तमयी वस्तु का कथन करने की पद्धति स्याद्वाद है। पदार्थ के अनन्त धर्मों का सम्यक् विवेचन करने में स्याद्वाद सहायता प्रदान करता है। इस रूप में स्याद्वाद अनेकान्तवाद को प्रमाणित करता है। 'स्याद्' शब्द के बिना अनेकान्त का प्रकाशन सम्भव नहीं है। स्याद्वाद एक चिन्तन–प्रक्रिया है जिसका एक वैज्ञानिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक आयाम है। इसका महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि यह प्रत्येक वस्तु की यथार्थता को सापेक्षता में ढूंढता है। अतः एक ही

वस्तु के सम्बन्ध में उत्पन्न हुए विभिन्न दृष्टिकोणों का समन्वय स्याद्वाद के माध्यम से किया जा सकता है। इस रूप में जैन दर्शन की अनेकान्त दृष्टि से समस्त विरोधों का परिहार सम्भव होता है, जिससे विभिन्न दृष्टिकोणों से चिन्तन करते हुए वस्तु के विभिन्न स्वरूपों में समन्वय भी स्थापित किया जाता है।

अनेकान्तवाद इन सभी प्रकार की विषमताओं से संघर्षित समाज को एक नयी दिशा प्रदान करता है। यह अनुशासन तथा सुव्यवस्था की सुस्थिर एवं वैचारिक चेतना का आधार प्रस्तुत करता है। इससे आस्था एवं ज्ञान की व्यवस्था में नवीन मार्ग प्रशस्त होता है। संघर्ष के स्वर बदल जाते है तथा समन्वय् की मनोवृत्ति, समता की प्रतिध्वनि एवं सत्यान्वेषण की चेतना गतिशील हो जाती है। आधुनिक विश्व के समस्त विरोधों के समाधान का आधार भी अनेकान्तवाद ही हो सकता है, जिसके आधार पर राजनीतिक संघर्षों, सामाजिक विद्वेषों, धार्मिक मतभेदों, आर्थिक असमानता एवं सांस्कृतिक विसंगतियों को दूर किया जा सकता है। समन्वयवादिता के आधार पर सर्वथा एकान्तवादियों को एक धरातल पर ससम्मान बैठाने का मूल इसमें निहित है। अतः अनेकान्तवादी दृष्टि से राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संघर्षों को दूर किया जा सकता है।